© 2017 IJSRST | Volume 3 | Issue 7 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X
Themed Section: Science and Technology

संस्कृत काव्यशास्त्र में चमत्कार की अवधारणा

सत्येन्द्र कुमार सिंह
(शोधच्छात्र)
संस्कृत विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
इलाहाबाद

भारतीय काव्यशास्त्र में चमत्कार तत्त्व का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। यह शब्द प्राचीन होते हुए भी नवीन प्रतीत होता है। प्राचीन इस अर्थ में क्योंकि इस शब्द का प्रयोग आचार्य आनन्दवर्धन ने अपने ग्रन्थ ध्वन्यालोक में तथा उसके परवर्ती अग्निपुराण, क्षेमेन्द्रादि अपने काव्यशास्त्रीय ग्रंथों में करते आये हैं और यह शब्द नवीन इस दृष्टि से प्रतीत होता है कि चमत्कार शब्द के व्यापक अर्थ को आधुनिक आचार्यों ने प्रतिष्ठित किया है। यह शब्द जहाँ एक ओर काव्यास्वाद की प्रक्रिया से जुड़ा अतिशय चर्चित है, वहीं दूसरी ओर बौद्धिक आयाम तथा शब्दों के इन्द्रजाल को अपने आप में समेटे हुए है। साथ ही साहित्य से भिन्न क्षेत्रों में भी चित्त को चकित कर देने वाले वस्तु व्यापार इसकी परिधि में आ जाते हैं।

सर्वप्रथम तो यह तथ्य विचारणीय है कि 'चमत्कार' शब्द साहित्यशास्त्र में आया कैसे? दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि चमत्कार शब्द काव्यशास्त्र जितना प्राचीन तो है नहीं और जब यह उतना प्राचीन नहीं तो स्वाभाविक है कि यह शब्द किसी अन्य क्षेत्र से काव्यशास्त्र की धारा में समाहित हो गया होगा। इस विषय पर विद्वत् जन एक मत नहीं है। कुछ विद्वान इसे दर्शनानुप्राणित मानते है जबकि कुछ अन्य इसे पाकशास्त्र से तथा कुछ अन्य इसे बिजली तथा बर्तनादि की चमक से अनुप्राणित मानते हैं।

प्रत्यभिज्ञा शैव दर्शन में शिव की इच्छा शक्ति के परिणामी स्वरूप के रूप में चमत्कार को स्वीकार किया गया है। शैव दर्शन में शिव को एक मात्र परमतत्त्व माना गया है। यद्यपि परब्रह्म, सनातन, पूर्ण चैतन्य स्वरूप, उस परम शिव की शक्तियों का कोई अन्त नहीं है, फिर भी वे अपनी पाँच प्रधान शक्तियों पर निर्भर रहते है। ये शक्तियाँ हैं– चित्, आनन्द, इच्छा, ज्ञान तथा क्रिया।[1] परमशिव में ''सोऽकामयत एकोऽहं बहुस्याम् प्रजायेयम्' की आकांक्षा ही उनकी इच्छा शक्ति है, जिसका स्वरूप चमत्कार है।

अग्निपुराण में चमत्कार को ईश्वर, चैतन्य का पर्याय स्वीकार करते हुए कहा गया है–

अक्षरं परमं ब्रह्म सनातनमजं विभुम्,
वेदान्तेषु वदन्त्येकं चैतन्यं ज्योतिरिश्वरम्।
आनन्दस्सहजस्तस्य व्यज्यते स कदाचन,
व्यक्तिः सा तस्य चैतन्य चमत्कार रसाह्वया।[2]

यहाँ पर ईश्वर को अक्षर, परब्रह्म, सनातन, अजन्मा, विभु, एक, चैतन्य बताया गया है, उसका सहज आनन्द जब कभी व्यक्त होता है तो उसकी अभिव्यक्ति को चमत्कार अथवा रस कहते हैं। योग दर्शन में चित्त चमत्कार की चर्चा की गयी है।

डॉ0 वी0 राघवन ने ऐसा विचार व्यक्त किया है कि रस की धारणा की तरह ही चमत्कार की अवधारणा भी पाकशास्त्र से प्राप्त हुई है।[3] पण्डित बलदेव उपाध्याय ने भी इसी कथन का प्रायः हिन्दी रूपान्तर करते हुए लिखा है कि– ''रस और काव्यपाक आदि काव्यतथ्यों की धारणा के समान चमत्कार की भावना के लिए भारतीय

साहित्यशास्त्र पाकशास्त्र का ऋणी है। रस और पाक शब्द पाकशास्त्र से ग्रहण कर भारतीय आलोचना में व्यवहृत हुए हैं। उनका कहना है कि चमत्कार शब्द में चमत् शब्द मूलतः ध्वन्यात्मक रहा होगा और किसी चटपटी चीज के खाने के समय हम लोग अपनी चटपटी जीभ से होठों को चाटते हुए जो चट्, चट् या चप्, चप् की ध्वनि उत्पन्न करते हैं, उसी के अनुकरण पर निर्मित यह चमत्कार तत्त्व है।''[4] कालान्तर में वह किसी आनन्दात्मक भाव के समय होने वाले स्फुरण के अर्थ के रूप में विकसित हो गया।

विद्वज्जन अपने बुद्धि और विवेक के बल पर कुछ भी कहने के लिए स्वतन्त्र है किन्तु इस तथ्य को अंगीकार करना कष्ट साध्य प्रतीत होता है कि चमत्कार शब्द पाकशास्त्र से काव्यशास्त्र की धारा में समाहित हो गया हो। चमत्कार तत्त्व का सर्वांगीण अनुशीलन करने पर हम पाते हैं कि काव्यशास्त्र में प्रयुक्त चमत्कार शब्द पाकशास्त्र से काव्यशास्त्र में नहीं आया बल्कि यह तो दर्शनानुप्राणित है और उसी मार्ग से होते हुए काव्यशास्त्र में प्रतिष्ठित हुआ है तथा यह काव्यशास्त्र की अपनी सृष्टि भी नहीं है।

चमत् का अर्थ कान्ति, दीप्ति आदि है और इनको करने वाले को चमत्कार कहते हैं। लोकातीत की ज्ञानधारा के उत्पन्न होने से चित्तवृत्ति का विस्तार ही चमत्कार है, जो लोकोत्तरत्व का पर्यायवाची माना गया है। पुलिंग चमत्कार शब्द की व्युत्पत्ति 'चमुभुक्षे' धातु से होती है, एक अन्य धारण के अनुसार 'चमत्कार' शब्द में प्रयुक्त चमत् आश्चर्य बोधक अव्यय है तथा 'कार' शब्द 'कृञ्' धातु से भाव अर्थ में घञ् प्रत्यय और कर्ता अर्थ में 'अण्' प्रत्यय द्वारा निष्पन्न हुआ है। इसका विग्रह वाक्य है–'चमत्करणं चमत्कारः चमत्कृतिर्वा' ऐसा होगा। प्रो0 रामप्रताप ने चमत्कार पद की पाँच प्रकार की व्युत्पत्ति की है[5]–

1. चमत्करोतीति चमत्कारः भावे प्रयोगः।
2. चमत्क्रियते (सामाजिकः) अनेनेति चमत्कारः कर्मणि करणे च प्रयोग।
3. चमत्करणं चमत्कारः भावे प्रयोगः।
4. चमत्क्रियतेऽसौ चमत्कारः चमत्कृतार्थः।
5. चमत्कारोऽस्मिन् विद्यते इति चमत्कारः चमत्कारि काव्यम् अधिकरणे लाक्षणिक प्रयोगः।

उपर्युक्त व्युत्पत्तियों से यह तथ्य उभरकर सामने आता है कि जो मानस हृदय को चमत्कृत करता है वह चमत्कार है। यह 'चमत्कृत' शब्द व्याख्यापेक्षित है। पदार्थ, भाव, व्यापारादि से चित्त में विलक्षण चमक या यह कहे कि सन्वोद्रेक से उत्पन्न चित्त का प्रकाशात्मक विस्तार ही चमत्कृत है। समय के साथ 'चमत्कृत' तथा 'चमत्कार' पर्याय माने जाने लगे। चमत्कार शब्द– चित्त विस्तार हेतुता काव्यांश जीवातुभूतता, अनुभूति, कवि प्रतिभा की प्रेरकता आस्वाद तथा आह्लाद जैसे भावों का अभिव्यंजक है।[6] चमत्कार वह शक्ति है जिसके सम्पर्क मात्र से रस, गुण, रीति, अलंकार तथा शब्दार्थ लोकोत्तर भावना से समृद्ध हो जाते हैं तथा चित्त तन्मयीभवन वाली आनुभूतिक योग्यता को प्राप्त कर लेता है।

हिन्दी शब्द संग्रह नामक कोश ग्रन्थ में चमत्कार शब्द के आश्चर्य, विलक्षण बात, अद्भुत घटना, करामात, विचित्रता आदि अर्थ बताये गये हैं।[7] संस्कृत हिन्दी कोश में चमत्कार के विस्मय, आश्चर्य, खेल, तमाशा, काव्यसौन्दर्य (जिससे काव्यरस की अनुभूति होती है), पर्याय माने गये हैं।[8] अंग्रेजी में एण्टोनिश्मैण्ट, सप्राइज, वाण्डर एमेजमेन्ट आदि अर्थ बताये गये हैं, इसके साथ ही अंग्रेजी में ीवू ेचमबजंबसम चवमजपबंस बींतउ जींज ूपबी बवदेजपजनजमे जीम मेमदबम व िचवमजतलण[9] के अर्थ में इस शब्द का प्रयोग मिलता है। उर्दू भाषा में मोजिमा शब्द से चमत्कार के व्यवहित किया जाता है। शब्द– कल्पद्रुम नामक कोश ग्रंथ में चमत्कार शब्द विस्मय की भांति चित्त विस्तार रूप में माना गया है।[10]

भारतीय काव्यशास्त्र में चमत्कार दो पारिभाषिक अर्थों में प्रचलित है– विस्मय (अद्भुत) और आस्वाद (काव्यास्वाद)। कुछ विद्वत् जन सौन्दर्य को भी चमत्कार के समानार्थक शब्द के रूप में मान्यता दी लेकिन मेरे विचार में चमत्कार को सौन्दर्य रूप में न मानकर सौन्दर्यानुभूति जन्य आनन्द को मानना चाहिए। सौन्दर्य का अनुभूति परक अर्थ ग्रहण करने पर यह शब्द भी चमत्कार तत्त्व का वाचक प्रतीत होता है।

आचार्य भरत ने अपने लोक प्रसिद्ध ग्रन्थ 'नाट्यशास्त्र' में 'कर्मातिशयनिनिर्वृत्तयों विस्मयो हर्ष संभर्व' कहा है।[11] अर्थात् लोकातिशायी कर्म से उत्पन्न होने वाला आनन्दज भाव विस्मय है। आचार्य विश्वनाथ ने विस्मय नामक चित्त विस्तार को चमत्कार कहा है।[12] उनकी इस उक्ति से यह स्पष्ट होता है कि उन्होंने विस्मय, चित्त विस्तार (विकास) तथा चमत्कार को एक दूसरे का समानार्थी माना है। साहित्यसार की टीका में भी चमत्कार दर्शनादिजन्यचित्त वृत्ति को विस्मय कहा गया है। काव्य प्रकाश की दीपिका टीका में 'विस्मयापरपर्यायश्चमत्कारः सर्वप्राणभूता'[14] कहकर चमत्कार के आस्वादत्व को व्यक्त किया है।

चमत्कार तत्त्व काव्यानन्द या काव्यास्वाद के रूप में अतिशय चर्चित शब्द है। जब सहृदय लोकव्यवहार से ऊपर उठकर श्रव्य या दृश्य कथावस्तु को आत्मसात कर अपने को उसी रूप में देखता है तो उस क्षण उसको जो अनुभूति होती है, वह अनुभूति ही काव्यास्वाद है। इसी को समानुभूति भी कहा जाता है। इस अवस्था में विषय और विषयी के मध्य पार्थक्य सूचक द्वैत चेतना का तिरोभाव हो जाता है और सहृदय को लोकोत्तर आनन्द की अनुभूति होती है।

आचार्य मम्मट ने काव्य रचना के छः प्रयोजन बताये हैं–

काव्यं यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये।
सद्यः परिनिर्वृतये कान्तासंमिततयोपदेशयुजे।।[15]

अर्थातृ काव्य–निर्माण के छः प्रयोजन होते हैं जिनमें से तीन यश, अर्थ तथा अनिष्ठनिवारण कविनिष्ठ जबकि अन्य तीन व्यवहार ज्ञान, काव्यानन्द तथा कान्ता के समान उपदेश सहृदय या पाठक निष्ठ होते हैं। इन काव्य प्रयोजनों में आया हुआ 'सद्यः परिनिर्वृतये' जिसे व्याख्यायित करते हुए उन्होंने 'सकलप्रयोजनमौलिभूतं' तथा 'विगलितवेद्यान्तरमानन्दम्' कहा है, काव्यास्वाद, अर्थ में प्रयुक्त है अर्थात् जब काव्य पढ़ते सुनते या दृश्य काव्य को देखते हैं तो सहृदय एक अलौकिक भावभूमि पर पहुँच जाता है, जो लौकिक जीवन के सुख–दुःखों से सर्वथा विर्निमुक्त तथा आनन्दमयी अवस्था है और यही चमत्कारावस्था है। आचार्य मम्मट मध्यम काव्य का निरूपण करते हुए कहते हैं कि ''वाच्य से अधिक चमत्कारी व्यंग्य न होने पर मध्यम काव्य होता है''। प्रसंग स्थल पर 'चमत्कारित्वात्' पद काव्यानन्दार्थ में प्रयुक्त है। उक्त प्रसंग के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि साहित्यशास्त्र में चमत्कार तथा आनन्द (काव्यानन्द) दोनों एक ही भाव को व्यक्त करते हैं। ध्वन्यालोककार आचार्य आनन्दवर्धन ने इसे 'प्रीतये' पद से व्यक्त किया है।

काव्यशास्त्र में चमत्कार के उपर्युक्त सभी अर्थ बताये गये हैं, इसके साथ ही आनन्दवर्धन द्वारा प्रयुक्त 'स्फुरित', स्फुरणा तथा चमत्कृति शब्दों को रखा जा सकता है–

यदपि तदपि रम्यं यत्र लोकस्य किञ्चित्।
स्फुरितमिदमितीयं बुद्धिरभ्युज्जिहीते।।
स्फरेणं काचिदिति सहृदयानां चमत्कृतिरूत्पद्येत।।[16]

चमत्कार की अर्थ विकृति से खिन्न होकर डॉ0 नगेन्द्र ने लिखा है कि ''आगे चलकर भारतीय साहित्य में चमत्कार, लोकोत्तर आदि शब्दों का स्थूल अर्थों में आश्चर्यजनक तत्त्वों के लिए प्रयोग होने लगा और इन शब्दों

की अर्थ विकृति से काव्य मूल्यों में भी विकृति आने लगी। चमत्कार कुतूहल का पर्याय होकर रसवादी काव्यमर्मज्ञों के लिए क्षोभ का कारण बन गया।'' डॉ0 सत्यदेव चौधरी ने लिखा है कि ''समुचित यह रहेगा कि अद्भुत तत्त्व को न तो हमें रामचन्द्र–गुणचन्द्र के समान अद्भुत नाम देना चाहिए और न ही विश्वनाथ के समान इसे विस्मय का अपर पर्याय मानना चाहिए क्योंकि इनसे अद्भुत रस और विस्मय नामक स्थायिभाव का भ्रम होता है। स्पष्टता के लिए इसे धर्मदत्त के समान चमत्कार नाम ही देना चाहिए।[17]

अन्वेषणोपर्यन्त हम पाते हैं कि चमत्कार के पर्याय के रूप जिन पदों का प्रयोग काव्यशास्त्र तथा लोकव्यवहार में हमें दृष्टिगोचर होते हैं, उन सबके भावों अपने में समेटे होने के साथ ही साथ एक विशिष्ट भाव को व्यक्त करता है और वह भाव है काव्यानन्द है। वर्तमान काव्यशास्त्रीय परम्परा में चमत्कार पद उच्चरित होते ही काव्यानन्दार्थ को प्रकट करता है और इसी भाव को अभिव्यक्त करने के लिए आधुनिक काव्यशास्त्रीय आचार्यों को इस पद का प्रयोग करते हुए देखे जा सकते हैं। काव्यप्रकाश की आदर्शटीका में चमत्कार शब्द का प्रयोग साक्षात्कार रूप आस्वाद अर्थ में किया गया है–

चमत्कारः साक्षात्काररूप आस्वादः।[18]

काव्यप्रकाश की मधुमती टीका में 'विगलितवेद्यान्तरमानन्दं' को ही चमत्कार माना गया है।[19] चमत्कार तत्त्व दर्शनशास्त्र से काव्यशस्त्र की धारा में अपना स्थान बनाते हुए नित्य–नूतनता को प्राप्त करता हुआ आज काव्य के परमप्रयोज्य तत्त्व के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त की। काव्य का परमतत्त्व आनन्द रूप ही है तो किसी अन्य पद से इस भाव को व्यक्त करने की अपेक्षा यह अधिक तर्कसंगत होगा कि चमत्कार तत्त्व का ही प्रयोग किया जाय। काव्यालोककार हरिदास ने इस तथ्य को रेखांकित करते हुए चमत्कार तत्त्व को काव्यात्मा के रूप में प्रतिष्ठित किया है। वे कहते–

विशिष्टशब्दरूपस्य काव्यस्यामा चमत्कृतिः।[20]

इनके पूर्ववर्ती पण्डितराज जगन्नाथ ने भी अपने काव्यलक्षण का परिष्कार करते हुए चमत्कार को काव्य का जीवातुभूत स्वीकार किया है, इतना ही नहीं आचार्य ने काव्यविभाजन के प्रसंग में चमत्कार को ही नियामक तत्त्व स्वीकार किया है। इसी तरह चिरञ्जिव भट्टाचार्य ने भी चमत्कारोत्पादन में समर्थ वाक्य रचना को ही काव्यत्व की संज्ञा दी। वागीश्वर वेदालंकार ने भी कुछ इसी प्रकार के विचार व्यक्त किया है उनकी दृष्टि में रसादि तत्त्वों से हीन वाक्यरचना यदि चमत्कारोत्पादन में समर्थ हो तो वह उत्तम काव्य की श्रेणी में अपना स्थान बना सकती है। अतीनवीन युगी आचार्य रामप्रताप ने आनन्द को चमत्कार मानते हुए उसे काव्य का परम तत्त्व स्वीकार किया–

अक्षरं परमं ब्रह्म सनातनमजं विभुम्।
वेदान्तेषु वदत्येकं चैतन्यं ज्योतिरीश्वरम्।।
आनन्द वदत्येकं व्यज्यते स कदाचन।
व्यक्तिः सा तस्य चैतन्यचमत्काररसाह्वया।।
चमत्करोति यः काव्ये चमत्कारः स उच्यते।
आस्वादयति काव्यार्थान् सामाजिकस्य चेतसि।।
काव्यसारश्चमत्कारः काव्यसारश्चमत्कृतेः।
तस्मात् काव्ये चमत्कारे भावकानां भवेद्रुचिः।।[21]

आचार्य रामप्रताप ने चमत्कार को लोकोत्तर आनन्द का अपर पर्याय माना है। इन्होंने चमत्कार को काव्य के कारण तथा कार्य दोनों रूपों में प्रतिष्ठित किया है, जब हम इस तथ्य का अनुशीलन करते हैं तो पाते हैं कि

चमत्कार काव्य का कार्य है इसमें कोई शंका नहीं है परन्तु चमत्कार की कारणता में जहाँ रामप्रताप ने इसे मूल कारणों में स्थान दिया, वहीं मेरा मानना है कि चमत्कार काव्य के प्रति कारण तो है पर उस कोटि का नहीं जिस कोटि में शक्त्यादि की गणना की जाती है, यह काव्य सर्जन का प्रेरक तत्त्व है। जिससे प्रेरित होकर कवि काव्यरचना में प्रवृत्त होता है।

डॉ0 नगेन्द्र का यह कथन कि ''चमत्कार कुतुहल का पर्याय होकर रसवादी काव्य मर्मज्ञों के क्षोभ का कारण बन गया। उचित ही प्रतीत होता है, क्योंकि अभी तक जिस परमपद पर रस की सत्ता स्थापित थी अब उसी स्थिति की ओर चमत्कार तत्त्व शनैः शनैः बढ़ रहा है।

साहित्य में चमत्कार तत्त्व के सम्बन्ध में केवल इतना कहना पर्याप्त होगा कि साहित्य/साहित्यशास्त्र में ऐसा कोई पक्ष नहीं जिसके मूल में चमत्कार प्रतिष्ठित न हो चमत्कार उन सभी तत्त्वों के भाव अपने में समेटे है जिनको अभिव्यक्त करने के लिए काव्यशास्त्र में अनेक तत्त्व विद्यमान है। इतना सब होने के बावजूद इसका झुकाव काव्यानन्द की ओर अधिक है। चमत्कार चाहे बौद्धिक हो, भोगवेश रूप में हो अथवा कल्पनाजन्य हो वह आह्लादजनक ही होता है। अतः चमत्कार तत्त्व की समस्त साहित्यिक परिव्याप्ति स्वतः सिद्ध है।

सन्दर्भ सूची

1. तन्त्रसार, प्रथमाह्निक उपोद्धत–5
2. अग्निपुराण 333/1–2।
3. सम कान्सेप्ट्स ऑफ अलंकारशास्त्र पृ0 269–70।
4. भारतीय साहित्यशास्त्र–भाग–2, पं0 बलदेव उपाध्याय, पृ0 261।
5. काव्यचमत्कारः रामप्रताप, पृ0 1।
6. वही, भूमिका तथा काव्यचमत्कारमीमांसा पृ0 9–25।
7. हिन्दी शब्द संग्रह पृ0 413।
8. संस्कृत हिन्दी कोश– वी0एस0 आप्टे पृ0 372।
9. "दोतपज म्दहसपी क्पबजपवदंतल. ट्पैण्।चजमए च्ण 203
10. शब्दकल्पदुम पृ0 433।
11. नाट्यशास्त्र 7/27।
12. चमत्कारचित्तविस्तार रूपो विस्मयापर पर्यायः। साहित्दर्पण पृ049।
13. साहित्यसार की सरसामोद व्याख्या, पृ0 203।
14. काव्यप्रकाशः (षोलह टीकाओ का संग्रह)।
15. काव्यप्रकाश, 1/2।
16. ध्वन्यलोक–चतुर्थ उद्योत पृ0 362।
17. अद्भुत रस की स्थिति, अद्भुत तत्त्व की महत्ता– डॉ0 सत्यदेव चौधरी, पृ0 147।।
18. काव्यप्रकाश, आदर्श टीका, 4.28
19. वही, मधुमती टीका, 1,9
20. काव्यालोक–सू0200 पृ0 446।
21. काव्यचमत्कारः पृ0 76–77।